International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2016; Page No. 03-04

स्त्री-मुक्ति की अवधारणा: वैचारिक दृष्टिकोण

[1] सन्तोष कुमार, [2] डॉ. रमेश कुमार गोहे

[1] शोध छात्र, हिन्दी विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ |

[2] सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ |

प्रस्तावना

स्त्री एवं पुरुष के सहयोग से परिवार का निर्माण होता है | सृष्टि संरचना में पुरुष की तुलना में स्त्री का योगदान अधिक है, इसलिए स्त्री को सृष्टि का आधार कहा जाता है | पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री का स्थान हमेशा ही दोयम दर्जे का रहा है | अतीत से लेकर वर्तमान तक हमेशा ही नारी आर्थिक, मानसिक, दैहिक, नैतिक शोषणों से उत्पीड़ित होती रही है | अपनी इसी उत्पीड़न से त्रस्त होकर स्त्रियों ने अपनी मुक्ति हेतु समय-समय पर विद्रोह की आवाज उठाई |

स्त्री-मुक्ति का मूल प्रश्न महिला सशक्तीकरण से जुड़ा हुआ है क्योंकि स्त्री के सशक्त होने से समाज भी सशक्त बनता है | प्राय: नारा दिया जाता है कि –'सशक्त नारी सशक्त समाज'- नारी को नि:शक्त बनाने में मुख्य भूमिका पुरुषों की रही है | डॉ. सुनंदा बनर्जी लिखती हैं- **"**महिलाओं की मुक्ति का प्रश्न महिला सशक्तीकरण से बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है | हर समाज में यदि औरतें दोयम दर्जे की जिन्दगी जीती रही हैं और उन्हें बन्धनों में रहना पड़ा है तो सिर्फ इसलिए कि सारे परिदृश्य पर पुरुष हावी रहे हैं |**"[1]** समाज पर पुरुषों के हावी होने का मुख्य कारण यह भी रहा है कि सभी नियम, कायदे-कानून पुरुषों द्वारा ही बनाएं गये हैं इसलिए अपनी सुविधा अनुसार वे इसका उपयोग करते हैं |

स्त्री मुक्त होकर एवं सम्पूर्ण स्वतंत्रताओं को पाकर खुले मन से समाज में जीना चाहती है | वह किसी पर अपना अधिकार या प्रभुत्व नहीं चाहती है | **"**हमें न किसी पर जय चाहिए न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुत्व चाहिए न किसी पर प्रभुता | केवल अपना वह स्थान, वे स्वत्व चाहिए जिनका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं है, परन्तु जिसके बिना हम समाज का उपयोगी अंग बन नहीं सकेंगी |**"[2]** महादेवी वर्मा के उपर्युक्त कथन स्त्री हेतु समाज में समता के अधिकार की वकालत करते हैं |

स्त्री, पुरुष की अर्धांगिनी, सहधर्मिणी, कही जाती है | संसार में पुरुष की कल्पना नारी बिना संभव नहीं है | विश्व के प्रत्येक पुरुषों का निर्माण नारी ही के गर्भ में प्रारम्भ होता है, लेकिन वही नारी पुरुष की सामंतवादी सोच द्वारा सर्वत्र गुलामी की जंजीरों में जकड़ी हुई नज़र आती है | मनुस्मृति में कहा गया है कि-

> **"**बालया वा युवत्या वा वृद्धया वापि योपिता
> न स्वतन्त्र्येण कर्तव्यं किंचित्कार्य गृहेष्वपि |
> बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत्पाणिग्राहस्य यौवने
> पुत्राणाम् भर्तति प्रेते न भजेत्स्त्री स्वतन्त्रताम् |**"[3]**

अर्थात् स्त्री बालिका, युवती या वृद्धा हो, उसे अपने घर में भी कभी कोई काम अपनी स्वतंत्रता से नहीं करना चाहिए एवं स्त्री को बाल्यावस्था में पिता, युवती होने पर हाथ पकड़ने वाले पति, पति की मृत्यु के पश्चात् पुत्र के अधीन रहना चाहिए उसे कभी स्वतंत्र नहीं रहना चाहिए | स्त्री के प्रति यह कैसा न्याय है ? यह पुरुष की रूढ़िवादी मानसिकता से ग्रसित बात कही जा सकती है | क्या स्त्री मनुष्य नहीं है ? क्या वह दासता की जंजीरों में बधने के लिए पैदा हुई है ? तुलसीदास जी 'रामचरितमानस' में स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं- **"**कत विधि सिरजी नारि जग माहीं | पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं |**"[4]** जब पराधीन स्त्री को स्वप्न में सुख की प्राप्ति नहीं होती तो यथार्थ के धरातल पर सोचना कोसों दूर की बात है | पराधीनता की इन्हीं बेड़ियों से जकड़ी स्त्री अपनी मुक्ति का प्रयास करती है |

स्त्री-मुक्ति का सपना प्रत्येक स्त्री क्यों देखती ? इस क्यों के उत्तर में रमणिका गुप्ता ने अपनी पुस्तक 'स्त्री-मुक्ति की अवधारणा: संघर्ष और इतिहास' में प्रश्नों के माध्यम से इस बात को स्पष्ट करने का प्रयास किया है- **"**आखिर क्या अर्थ है स्त्री-मुक्ति का ?

1. स्त्री का खुद का निर्णय करना ?
2. स्त्री का स्वायत्तता हासिल करना, जिसमें उसे अपनी जिन्दगी को खुद संयोजित करने की आजादी हो ?
3. स्त्री और पुरुष की समानता यानी लिंग के आधार पर विभेद का न होना ?
4. पुरुष वर्चस्व व उनकी हिंसा का प्रतिरोध और नकार ?**"[5]**

यदि प्रश्नों के उत्तर में जाये तो पाएंगे कि स्त्रियों को पुरुषों की भांति अपने जीवन जीने एवं निर्णय लेने की आजादी होनी चाहिए | स्त्री केवल दासी रूप में नहीं अपितु पुरुष की सहयोगिनी बनकर जीवन जीना चाहती है | कार्यक्षेत्र में लिंग के आधार पर होने वाले भेदभाव की समाप्ति होनी चाहिए एवं पुरुष को अपनी वर्चस्ववादी रवैये को बदलना होगा एवं हिंसात्मक रवैये में सुधार लाना होगा |

यदि स्त्री को निर्णय लेने एवं स्वायत्तता का अधिकार, लैंगिक भेदभाव समाप्त कर समानता का अधिकार आदि प्राप्त हो जाते हैं तो वह स्वच्छंद होकर पुरुष के साथ जीवनयापन कर सकती है | अपनी मुक्ति पाकर वह पुरुष से विद्रोह नहीं करती अपितु वह समझती है कि –

> **"**मैं तुमसे मुक्त होना चाहती हूँ
> इसका अर्थ यह तो नहीं
> मैं तुम्हारे प्यार से मुक्त होना चाहती हूँ
> मैं तो खुद प्यार करने की हक़दार होना चाहती हूँ
> खुद प्यार करना चाहती हूँ |**"[6]**

कविता की ये पंक्तियाँ नारी को पुरुष की संगिनी के रूप में स्थापित करती हैं न कि विद्रोहिनी के रूप में |

वर्तमान समय में संयुक्त परिवार का विघटन एवं एकल परिवार की स्थापना देखने को मिल रही है | संयुक्त परिवार में पति-पत्नी के सम्बन्ध अधिक मजबूत देखने को मिलते हैं लेकिन एकल परिवार में पति-पत्नी के मध्य यदि विवाद एक बार प्रारम्भ हो गया तो बात तलाक जैसी समस्या पर आकर रुकती है | स्त्री तलाक जैसी समस्या या आपसी विवाद से दूर रहना चाहती है | पद्मा सचदेव ने 'बूँद बावड़ी' में स्त्री-मुक्ति के इस प्रश्न को उठाते हुए लिखती हैं कि- **"**औरत को मुक्ति

किससे चाहिए ? अपने बच्चों से, उनके बाप से या उस घर से जिसमें तिनका-तिनका जोड़कर उसने गृहस्थी सहेजी है | मैं ये मानती हूँ कि औरत को मुक्ति उन बुराईयों से चाहिए जो आज और ज्यादा बढ़ गई हैं |"[7] स्त्री परिवार, पति, बच्चे या पारिवारिक जिम्मेदारी से कभी मुक्त नहीं होना चाहती है बल्कि समाज की उस बुराई से मुक्त होना चाहती है जो उसे सशक्त बनने में बाँधा पहुँचाते हैं |

स्त्री-मुक्ति का संकल्प सामाजिक समानता से प्रेरित है, न कि सामाजिक प्रभुत्व से एवं सामाजिक समानता के माध्यम से वह अपने को पुरुषों के समकक्ष रखकर सामाजिक विसंगतियों को समाप्त करना चाहती है | इसके लिए स्त्री-पुरुष का संयुक्त सहयोग अपेक्षित है | डॉ. चंद्रशेखर त्रिपाठी स्त्री-मुक्ति के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट रूप से कहते हैं- "स्त्री की मुक्ति का संकल्प पिंजरे जैसे प्रत्येक वातावरण को तोड़कर, उसे उन्मुक्त आकाश प्रदान करने का संकल्प है | यह स्त्री-पुरुष की एकात्म समानता के उद्देश्य से प्रेरित है | स्त्री के प्रति अन्याय पूर्व व्यवस्था के समस्त कारकों का विध्वंस कठिन अवश्य है, परन्तु असंभव नहीं |"[8] स्त्री को यदि समानता का अधिकार दिया जाता है तो केवल स्त्री का ही विकास नहीं होता अपितु उस सम्पूर्ण समाज का विकास होता है जिसमें वह जी रही है |

निष्कर्षत

स्त्री-मुक्ति की अवधारणा के मूल में सामाजिक रूप से आधी आबादी की समानता का प्रश्न जुड़ा हुआ है | स्त्रियाँ स्वयं को समाज में आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक अथवा सर्वांगीण रूप से सशक्त बनाकर पुरुषों के साथ बिना किसी भेदभाव के खुले मन से जीना चाहती हैं | वह किसी पर अपना प्रभुत्व स्थापित नहीं करना चाहती हैं अपितु संयुक्त सहयोग (स्त्री-पुरुष) के द्वारा स्त्री-जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास कर रही हैं | मुक्ति के इस मार्ग में वह विद्रोहिनी बनकर नहीं अपितु सहयोगिनी बनकर समाज में सामाजिक असमानता के भेदभाव को दूर करना चाहती है |

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आधी जमीन (सं. सरोज चौबे), विशेषांक:अक्टूबर-दिसम्बर 2001, औरतों का सशक्तीकरण क्यों ? – डॉ. सुनन्दा बनर्जी, पृ.सं.- 22
2. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
3. मनुस्मृति
4. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
5. रमणिका गुप्ता, स्त्री-मुक्ति की अवधारणा : संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण:2014, पृ.सं.- 27
6. वही, पृ.सं.- 12
7. पद्मा सचदेव, बूँद बावड़ी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण:1999, पृ. सं.-247
8. डॉ. चन्द्रशेखर त्रिपाठी, स्त्री विमर्श : साहित्य और समाज की संरचना में, ग्रंथलोक प्रकाशन, प्रथम संस्करण:2013, पृ.सं.-179